चंपा का मोबाइल

दीपक शर्मा

चंपा का मोबाइल

"एवजी ले आई हूँ, आंटी जी," चंपा को हमारे घर पर हमारी काम वाली, कमला, लाई थी।

गर्भावस्था के अपने उस चरण पर कमला के लिए झाड़ू-पोंछा सँभालना मुश्किल हो रहा था।

https://www.hindiadda.com/champa-ka-mobile/

चंपा का चेहरा मेक-अप से एकदम खाली था और अनचाही हताशा व व्यग्रता लिए था। उस की उम्र उन्नीस और बीस के बीच थी और काया एकदम दुबली-पतली।

मैं हतोत्साहित हुई। सत्तर वर्ष की अपनी इस उम्र में मुझे फुरतीली, मेहनती व उत्साही काम वाली की जरुरत थी न कि ऐसी मरियल व बुझी हुई लड़की की!

"तुम्हारा काम सँभाल लेगी?" मैं ने अपनी शंका प्रकट की।

"बिल्कुल, आंटी जी। खूब सँभालेगी। आप परेशान न हों। सब निपटा लेगी। बड़ी होशियार है यह। सास-ससुर ने इसे घर नहीं पकड़ने दिए तो इस ने अपनी ही कोठरी में मुर्गियों और अंडों का धंधा शुरू कर दिया। बताती है, उधर इस की माँ भी मुर्गियाँ पाले भी थी और अंडे बेचती थी। उन्हें देखना-जोखना, खिलावना-सेना..."

"मगर तुम जानती हो, इधर तो काम दूसरा है और ज्यादा भी है, मैं ने दोबारा आश्वस्त होना चाहा, "झाड़-बुहार व प्रचारने-पोंछने के काम मैं किस मुस्तैदी और सफाई से चाहती हूँ, यह भी तुम जानती ही हो..."

"जी, आंटी जी, आप परेशान न हों। यह सब लार लेगी..."

"परिवार को भी जानती हो?"

"जानेंगी कैसे नहीं, आंटी जी? पुराना पड़ोस है। पूरे परिवार को जाने समझे हैं। ससुर रिक्शा चलाता है। सास हमारी तरह तमाम घरों में अपने काम पकड़े हैं। बड़ी तीन ननदें ब्याही हैं। उधर ससुराल में रह-गुजर करती हैं और छोटी दो ननदें स्कूल में पढ़ रही हैं। एक तो हमारी ही बड़ी बिटिया के साथ चौथी में पढ़ती है..."

"और पति?" मैं अधीर हो उठी। पति का काम-धंधा तो बल्कि उसे पहले बताना चाहिए था।

"बेचारा मूढ़ है। मंदबुद्धि। वह घर पर ही रहता है। कुछ नहीं जानता-समझता। बचपन ही से ऐसा है। बाहर काम क्या पकड़ेगा? है भी इकल्ला उन पाँच बहनों में..."

"तुम घरेलू काम किए हो?" इस बार मैं ने अपना प्रश्न चंपा की दिशा में सीधा दाग दिया।

"जी, उधर मायके में माँ के लगे कामों में उस का हाथ बँटाया करती थी..."

"आज मैं इसे सब दिखला-समझा दूँगी, आंटी जी। आप परेशान न हों..."

अगले दिन चंपा अकेली आई। उस समय मैं और मेरे पति अपने एक मित्र-दंपति के साथ हॉल में बैठे थे।

"आज तुम आँगन से सफाई शुरू करो," मैं ने उसे दूसरी दिशा में भेज दिया।

कुछ समय बाद जब मैं उसे देखने गई तो वह मुझे आँगन में बैठी मिली। एक हाथ में उस ने झाड़ू थाम रखा था और दूसरे में मोबाइल। और बोले जा रही थी। तेज गति से मगर मंद स्वर में। फुसफुसाहटों में। उस की खुसुर-पुसुर की मुझ तक केवल मरमराहट ही पहुँची। शब्द नहीं। मगर उस का भाव पकड़ने में मुझे समय न लगा। उस मरमराहट में मनस्पात भी था और रौद्र भी।

विघ्न डालना मैं ने ठीक नहीं समझा और चुपचाप हॉल में लौट ली।

आगामी दिनों में भी मैं ने पाया जिस किसी कमरे या घर के कोने में वह एकांत पाती वह अपना एक हाथ अपने मोबाइल के हवाले कर देती। और बारी बारी से उसे अपने कान और होठों के साथ जा जोड़ती।

अपना स्वर चढ़ाती-गिराती हुई।

कान पर कम।

होठों पर ज्यादा।

"तुम इतनी बात किस से करती हो?" एक दिन मुझ से रहा न गया और मैं उस से पूछ ही बैठी।

"अपनी माँ से..."

"पिता से नहीं? मैं ने सदाशयता दिखलाई। उस का काम बहुत अच्छा था और अब मैं उसे पसंद करने लगी थी। कमला से भी ज्यादा। कमला अपना ध्यान जहाँ फर्श व कुर्सियों-मेजों पर केंद्रित रखती थी, चंपा दरवाजों व खिड़कियों के साथ-साथ उन में लगे शीशों को भी खूब चमका दिया करती। रोज-ब-रोज। शायद वह ज्यादा से ज्यादा समय अपने उस घर-बार से दूर भी बिताना चाहती थी।

"नहीं," वह रोआँसी हो चली।

"क्यों?" मैं मुस्कुराई, "पिता से क्यों नहीं?"

"नहीं करती..."

"वह क्या करते हैं?"

"वह अपाहिज हैं। भाड़े पर टेंपो चलाते थे। एक टक्कर में ऐसी चोट खाए कि टाँग कटवानी पड़ी। अब अपनी गुमटी ही में छोटे-मोटे सामान की दुकान लगा लिए हैं..."

"तुम्हारी शादी इस मंदबुद्धि से क्यों की?"

"कहीं और करते तो साधन चाहिए होते। इधर खरचा कुछ नहीं पड़ा..."

"यह मोबाइल किस से लिया?"

"माँ का है..."

"मुझे इस का नंबर आज देती जाना। कभी जरुरत पड़े तो तुम्हें इधर बुला सकती हूँ..."

घरेलू नौकर पास न होने के कारण जब कभी हमारे घर पर अतिथि बिना बताए आ जाया करते हैं तो मैं अपनी काम वाली ही को अपनी सहायता के लिए बुला लिया करती हूँ। चाय-नाश्ता तैयार करने-करवाने के लिए।

"इस मोबाइल की रिंग, खराब है। बजेगी नहीं। आप लगाएँगी तो मैं जान नहीं पाऊँगी..."

मैं ने फिर जिद नहीं की। नहीं कहा, कम-अज-कम मेरा नंबर तो तुम्हारी स्क्रीन पर आ ही जाएगा।

वैसे भी कमला को तो मेरे पास लौटना ही था। मुझे उसकी ऐसी खास जरुरत भी नहीं रहनी थी।

अपनी सेवा-काल का बाकी समय भी चंपा ने अपनी उसी प्रक्रिया में बिताया।

एकांत पाते ही वह अपने मोबाइल के संग अपनी खड़खड़ाहट शुरू कर देती - कभी बाहर वाले नल के पास, कभी आँगन में, कभी दरवाजे के पीछे, कभी सीढ़ियों पर। अविरल वह बोलती जाती मानो कोई कमेंटरी दे रही हो। मुझ से बात करने में उसे

तनिक दिलचस्पी न थी। मैं कुछ भी पूछती, वह अपने उत्तर हमेशा संक्षिप्त से संक्षिप्त रखा करती। चाय-नाश्ते को भी मना कर देती। उसे बस एक ही लोभ रहता : अपने मोबाइल पर लौटने का।

वह उसका आखिरी दिन था। उसका हिसाब चुकता करते समय मैं ने उसे अपना एक दूसरा मोबाइल देना चाहा, "यह तुम्हारे लिए है..."

मोबाइल अच्छी हालत में था। अभी तीन महीने पहले तक मैं उसे अपने प्रयोग में लाती रही थी। जब मेरे बेटे ने मेरे हाथ में एक स्मार्टफोन ला थमाया था, तुम्हारे सेल में सभी एप्लीकेशन तो हैं नहीं माँ..." और जभी से यह मेरे दराज में सुरक्षित रखा रहा था।

"नहीं चाहिए," चंपा ने उस की ओर ठीक से देखा भी नहीं और अपना सिर झटक दिया।

"क्यों नहीं चाहिए?" मैं हैरान हुई। उस की उस 'न' के पीछे उसकी ज्ञानशून्यता थी या मेरे प्रति ही रही कोई दुर्भावना?

"क्या करेंगी?" उस ने अपने कंधे उचकाए और अपना सिर दुगुने वेग से झटक दिया, "नहीं लेंगी..."

"इस से बात करोगी तो तुम्हारी माँ की आवाज तुम्हें और साफ सुनाई देने लगेगी..." मैंने अपना मोबाइल उस की ओर बढ़ा दिया। अपने आग्रह में तत्परता सम्मिलित करते हुए।

"सिम के बिना?" उस ने अपने हाथ अपने मोबाइल पर टिकाए रखे। मेरे मोबाइल की ओर नहीं बढ़ाए।

"तुम्हारा यही पुराना सिमकार्ड इस में लग जाएगा," मैं ने उसे समझाया।

"इस में सिम नहीं है," वह बोली।

"यह कैसे हो सकता है," मैं मुस्कुरा दी, "लाओ, दिखाओ..."

बिना किसी झिझक के उसने अपना मोबाइल मुझे ला थमाया।

उस के मोबाइल की जितनी भी झलक अभी तक मेरी निगाह से गुजरी थी, उस से मैं इतना तो जानती ही थी वह खस्ताहाल था मगर उसे निकट से देख कर मैं बुरी तरह चौंक गई!

उस की पट्टी कई खरोंचे खा चुकी थी। की-पैड के लगभग सभी वर्ण मिट चुके थे। स्क्रीन पूरी पूरी रिक्त थी। सिमकार्ड तो गायब था ही, बैटरी भी नदारद थी।

"बहुत पुराना है?" मैं ने मर्यादा बनाए रखना चाही।

"हाँ। पुराना तब भी था जब उन मेमसाहब ने माँ को दिया था, वह निरुत्साहित बनी रही।

"उन्होंने इस हालत में दिया था?" मैं ने सहज रहने का भरसक प्रयत्न किया।

"नहीं तब तो सिम को छोड़ कर इसके बाकी कल-पुरजे सभी सलामत थे। सिम तो माँ ही को अपना बनवाना पड़ा था..."

"फिर इसे हुआ क्या?"

"माँ मरी तो मैं ने इसे अपने पास रखने की जिद की। बप्पा ने मेरी जिद तो मान ली मगर इसकी बैटरी और इस का सिम निकाल लिया..."

"माँ नहीं है?" अपनी सहानुभूति प्रकट करने हेतु मैंने उस की बाँह थपथपा दी।

"हैं क्यों नहीं?" वह ठुमकी और अपनी बाँह से मेरा हाथ हटाने हेतु मेरे दूसरे हाथ में रहे अपने मोबाइल की ओर बढ़ ली, "यह हमारे हाथ में रहता है तो मालूम देता है माँ का हाथ लिए हैं..."

मैं ने उस का मोबाइल तत्काल लौटा दिया और अपने सेलफोन को अपने दराज में पुनः स्थान दे डाला।